भूदान-यज्ञ और शोषण-निवारण

रजि० नं० बी ४४४८
लाअिसेन्स नं० १५

हरिजनसेवक

दो आना

(संस्थापक : महात्मा गांधी)

भाग १७ | सम्पादक : मगनभाअी प्रभुदास देसाअी | अंक ९

मुद्रक और प्रकाशक
जीवणजी डाह्याभाअी देसाअी
नवजीवन मुद्रणालय, अहमदाबाद–९

अहमदाबाद, शनिवार, ता० २ मअी, १९५३

वार्षिक मूल्य देशमें रु० ६
विदेशमें रु० ८; शि० १४

बेचैन करनेवाली खबर

फाअिनेंस बिल पर हुअी बहसका जवाब देते हुअे लोकसभामें ता० १६ अप्रैलको अर्थमंत्री श्री सी० डी० देशमुखने नमक-कर जारी करनेके सुझावोंका जिक्र किया। अिस विषय पर अपना मत प्रगट करते हुअे अुन्होंने कहा :

> "अिस सवालको अनिश्चित कालके लिअे छोड़नेका विचार नहीं है। अुपयुक्त अवसर आने पर अुसका विचार करना पड़ेगा। लेकिन मैं यह नहीं मानता कि वह अवसर आ गया है। हां, मैं यह मानता हूं कि वह आ सकता है।" ('हिन्दुस्तान टाअिम्स', १७-४-'५३)

अच्छा होता अगर अर्थमंत्रीने यह भी बताया होता कि वह अुपयुक्त समय कब आनेवाला है, मौजूदा समयको वे अुपयुक्त क्यों नहीं मानते, और अुन्हें अैसा क्यों लगता है कि वह आ सकता है? क्या श्री देशमुख भारत-सरकारको अपने मतके पक्षमें लानेकी ही बाट देख रहे हैं? जो हो, हम सब लोगोंको यह बात याद रहनी चाहिये कि विदेशी सरकारके खिलाफ हमारे अहिंसक विद्रोहका ताना-बाना नमक, शराब और कपड़ा आदि वस्तुओंके आसपास ही बुना गया था। अिन विषयोंमें अपने निर्धारित अुद्देश्यके लिअे लड़ते लड़ते ही स्वतंत्रताके प्रति हमारे प्रेम और अुसकी प्राप्तिके लिअे लड़नेकी हमारी भावनाने अहिंसक विद्रोहका रूप पाया था। अैसी कोअी विशेष बात तो नहीं थी जिसके कारण हमने अुस समय अिस करका विरोध करना ठीक माना, लेकिन जो अब नहीं रह गयी है।

जैसा कि गांधीजीने कहा था, "नमक-करके अत्याचारका फल सबको अेकसा भोगना पड़ता है। . . . अुसकी सबसे कड़ी मार गरीबों पर पड़ती है। . . . छोटा बच्चा, अपाहिज और वृद्ध सब लोगोंको अिस अन्यायपूर्ण करसे समान कष्ट है। . . ."

"पानीको छोड़ दें, तो नमकके सिवा और दूसरी कोअी चीज नहीं जिस पर कर लगाकर सरकार अपनी लूटका विस्तार लाखों-करोड़ों भूखों, बीमारों, लूलों-लंगड़ों और अेकदम निराधार असहायों तक कर सके। मनुष्यकी चतुराअी हर मनुष्य पर लगनेवाले और अधिकसे अधिक जिस अमानुषिक करकी कल्पना कर सकती है, यह कर वैसा ही है।"

अिसलिअे हमें कहना पड़ता है कि अर्थमंत्रीके ये विचार बहुत बेचैन करनेवाले हैं और अुनका समय रहते विरोध होना चाहिये।

२०-४-'५३
(अंग्रेजीसे)

मगनभाअी देसाअी

हमारा अनोखा मिशन

[चांडिल सर्वोदय-सम्मेलनमें ता० ७–३–'५३ को दिये गये विनोबाके पहले दिनके भाषणकी पहली किस्त।]

१

पू० किशोरलालभाअी

जैसा कि शंकरराव देवने किया, मैं भी पू० किशोरलालभाअीके स्मरणसे अिसका आरम्भ करना चाहता हूं। जो अेक महान् कार्य अीश्वरने हमें सौंपा है, और जिसकी हमने अीश्वरके और जनताके सामने दीक्षा ली है, अुस काममें वे अत्यन्त तन्मय थे। गीताने जीवनकी कुंजी हमें बतायी थी — यों कहकर कि कर्ममें अकर्म हो सकता है और अकर्ममें भी कर्म हो सकता है। वे शरीरसे बहुत कमजोर थे, अिसलिअे जिसे हम स्थूल कर्म कहते हैं, वह वे बहुत नहीं कर पाते थे, तो भी चौबीस घंटे वे कुछ-न-कुछ करते ही रहते थे। फिर भी अुस कर्मका स्थूल आकार बहुत बड़ा नहीं हो सकता था। लेकिन अुन्होंने हमें यह बताया कि कर्म न कर सकनेकी हालतमें भी कितना महान कार्य हो सकता है। जिनके हृदय निर्मल होते हैं, परमेश्वरकी कृपासे जिनके राग-द्वेष धुल गये हैं, अैसे मनुष्योंकी केवल हस्ती ही बहुत काम कर जाती है। अैसे जो भी थोड़े लोग दुनियामें प्रकट होते हैं, अुनमें मैं किशोरलालभाअीकी गिनती करता हूं। बापूके पीछे अुनका हम लोगोंको सहारा था और वे अपने सहज सौजन्यसे हम लोगोंको सम्हाल लेते थे। अुतनी शक्ति हममें से दूसरे किसीमें अभी तक प्रकट नहीं हुअी है। अिसलिअे अुनका अभाव हम लोगोंको बहुत महसूस होता है और होता रहेगा। अुस अभावकी पूर्ति हम अपने आपस-आपसके सद्भावसे और सौहार्दसे ही कर सकते हैं। मैं आशा करता हूं कि वैसा सौहार्द, सौजन्य, सद्भाव और बंधुभाव हम लोगोंमें रहेगा, ताकि हमारे जरिये अीश्वरका कार्य संपन्न हो।

नये सालके लिअे संबल

हम अेक कार्यकर्ता-जमात हैं। यहां सम्मेलनमें आते हैं, तो कुछ बोल भी लेते हैं। लेकिन यह बोलना भी हमारा काम ही होता है। वह कोअी केवल वक्तृत्व नहीं हो सकता; कर्तृत्वका ही हिस्सा होता है। अैसे जो हम लोग अेकत्रित होते हैं, साल भर कुछ काम करके नारायणको वह समर्पण करनेके लिअे आते हैं और दूसरे सालके लिअे कुछ संबल लेकर जाना चाहते हैं। अैसे मौकों पर कुछ विचार-विनिमय, विचारोंकी लेन-देन कर लेते हैं। आज हमें अुसी दृष्टिसे हमारे कामके पीछे जो भूमिका है, वह देख लेनी चाहिये; कार्यका जो संशोधन करना है, अुस पर भी नजर डालनी चाहिये। 'कार्य-पद्धति', 'कार्यक्रम' और 'कार्य-रचना' अिन तीनों पर हमें थोड़ा विचार कर लेना चाहिये।

अखिल जागतिक दृष्टि

हम दुनियाके किसा भी गोशमें क्यों न काम करते हों, आज दुनियाकी हालत अैसी नहीं है कि सारी दुनिया पर नजर डाले बगैर हमारा काम चल सके। दुनियामें जो ताकतें काम कर रही हैं, जो नये प्रवाह शुरू हुअे हैं, कल्पनाओं और भावनाओंका जो संस्पर्श और संघष हो रहा है, अुसकी तरफ ध्यान देकर, अुस पर सतत नजर रखकर ही जो भी छोटा-सा कदम हम अुठाना चाहें, अुठा सकते हैं। समुचित दृष्टिके बिना केवल कर्म अंधा हो जायगा। अिसलिअे दुनियाकी हालतका खयाल करना होता है। आज हम देख रहे हैं कि दुनियाकी हालत बहुत चंचल है। अितना ही नहीं बहुत कुछ स्फोटक भी है। यानी अुसमें कअी खतरोंकी संभावना भरी है और कह नहीं सकते कि किस समय अुसमें से ज्वालामुखीका स्फोट होगा। यह कुछ नाहक भयावना चित्र मैं नहीं खींच रहा हूं। अिससे भयभीत होनेका मेरा अिरादा नहीं है, न आपको ही मैं भयभीत बनाना चाहता हूं। बल्कि जो हालत है, सिर्फ अुस ओर ध्यान खींचना चाहता हूं। कहा नहीं जा सकता कि दुनियामें किस क्षण क्या होगा। अैसी अस्थिर मनःस्थिति और परिस्थिति आज दुनियामें है।

विपरीत परिस्थिति

अेक-दो महीने पहलेकी बात है। दिल्लीमें कुछ ज्ञानी, विद्वान अेकत्रित हुअे थे और अुन्होंने अहिंसाके दर्शनके बारेमें कुछ चिन्तन-मनन, विमर्श किया। वह अखबारोंमें आता रहा और हम पढ़ते रहे। अुसमें हमारे पू० राजेन्द्रबाबूने जिक्र किया था कि "आज कोअी भी देश यह हिम्मत नहीं कर रहा है कि हम सैन्यके बगैर चलायेंगे।" अुन्होंने अिस बातका भी दुःख प्रगट किया कि "बावजूद अिसके कि गांधीजीको सिखावन हमने अुनके श्रीमुखसे सीधा अपने कानोंसे सुनी है और बावजूद अिसके कि हमने अुनके साथ कुछ काम भी किया है, हिन्दुस्तान भी आज अैसी हिम्मत नहीं कर पा रहा है।" हमारे महान नेता पंडित नेहरू कअी मर्तबा बोल चुके हैं कि दुनियाका कोअी मसला शस्त्र-बलसे हल नहीं हो सकता। हमारे ये भाअी, जो देशका नेतृत्व कर रहे हैं और जिन पर यह जिम्मेवारी देशने डाली है, अहिंसाको दिलसे मानते हैं। अुनका हिंसा पर विश्वास नहीं है। फिर भी यह हालत है कि सेनाको बनाने-बढ़ानेको, अुसको मजबूत करनेको जिम्मेवारी अुनको माननी पड़ती है। अिस तरह विचित्र परिस्थितिमें हम पड़े हैं।

दिल और दिमागका संघर्ष

स्थिति यह है कि श्रद्धा अेक वस्तु पर है, अैसा हमको आभास होता है, और क्रिया दूसरी ही करनी पड़ती है। हम चाहते तो यह हैं कि सारे हिन्दुस्तानमें और दुनियामें अहिंसा चले, हम अेक-दूसरेसे न डरें, बल्कि अेक-दूसरेको प्यारसे जीतें। प्यार ही कामयाब हो सकता है और सबको वह जीत सकता है, अैसा विश्वास दिलमें भरा है। तिस पर भी अेक दूसरी चीज हममें है, जिसे बुद्धि नाम दिया जाता है। वैसे वह भी हृदयका अेक हिस्सा है, और हृदय भी अुसका अेक हिस्सा है और यों दोनों मिले-जुले हैं, फिर भी हृदय कहता है कि हिंसासे कोअी भी मसला हल नहीं होगा। अेक मसला हल होता-सा दिखेगा, तो अुसमें से दूसरे दसों नये मसले पैदा होंगे। लेकिन बुद्धि तो तीनों गुणोंसे भरी है। अुसमें कुछ विचारकी शक्ति है, कुछ आवरण भी है, कुछ दर्शन है और कुछ अदर्शन है। अैसी हमारी संमिश्र बुद्धि हमें कहती है कि "हम सेनाको हटा नहीं सकते। जिस जनताके हम प्रतिनिधि हैं, वह जनता अुतनी मजबूत नहीं है। अुसमें वह योग्यता नहीं है। अिसलिअे अुसके प्रतिनिधिके नाते हम पर यह जिम्मेवारी आती है कि हम लश्कर बनायें, बढ़ायें और अुसे मजबूत करें।" अैसी आज हालत है। दीखता यह है कि रचनात्मक कार्य करें। पर वह सिर्फ दिलकी अिच्छा है। बुद्धि कहती है कि "सेना बनानी होगी, अिसलिअे सेना-यंत्र जिससे मजबूत बन सकेगा, अैसे यंत्रोंको स्थान देना होगा।" जिनकी श्रद्धा चरखे पर कम है, अुनकी बात मैं छोड़ देता हूं, लेकिन जिनकी श्रद्धा चरखे पर है, अुनसे यह सवाल पूछा जाता है कि क्या चरखे और ग्रामोद्योगके जरिये आप युद्ध-यंत्र मजबूत बना सकते हैं या युद्ध-यंत्र खड़ा कर सकते हैं? तो अुनकी बुद्धि, और हमारी बुद्धि भी, क्योंकि अुनमें हम सम्मिलित हैं, कहती है कि नहीं, अिन छोटे-छोटे अुद्योगोंके जरिये हम युद्ध-यंत्र सज्ज नहीं कर सकते हैं। कम्यूनिटी प्रोजक्टके बारेमें सरकारकी अिच्छा यह रही है कि पांच लाख देहातोंमें वे चलें। अभी थोड़े देहातोंमें आरम्भ हुआ है। लेकिन अिच्छा है कि वह और व्यापक बने और अुसके जरिये राष्ट्र समृद्ध हो, लक्ष्मीवान हो, गरीबी मिटे अित्यादि। पर अगर कल दुनियामें महायुद्ध छिड़ जाय, तो मैं कह नहीं सकता कि अेक भी कम्यूनिटी प्रोजेक्ट जारी रहेगा। और जिन्होंने अिस योजनाका अुपक्रम किया, वे भी यह नहीं कह सकते कि वह जारी रहेगा। तब फौरन बुद्धि जोर करेगी और हृदय छिप जायेगा। हृदय पर बुद्धि गालिब हो जावेगी और कहेगी कि अब तो राष्ट्र-रक्षण ही मुख्य वस्तु है।

जादूकी कुर्सी

यह मैं आत्मनिरीक्षणके तौर पर बोल रहा हूं। जो आज वहां जिम्मेवारीके स्थान पर बैठे हुअे हैं, अुनकी जगह पर अगर हम बैठते, तो अभी वे जो कर रहे हैं अुससे हम बहुत कुछ भिन्न करते, अैसा नहीं है। वह स्थान ही वैसा है। वह जादूकी कुर्सी है। अुस पर जो आरूढ़ होगा, अुस पर अेक संकुचित, अेक सीमित, अेक बने-बनाये, अेक अस्वाधीन दायरेमें सोचनेकी जिम्मेवारी आती है। अैसे दायरेमें, जिसको मैंने 'अस्वाधीन' नाम दिया है, लाचारीसे दुनियाका ओघ जिस दिशामें बहता हुआ दीख पड़ता है, अुसी दिशामें सोचनेकी जिम्मेवारी अुन पर आती है। बड़े-बड़े राष्ट्र — अमेरिका, रूस जैसे भी डरते हैं। वे अेक-दूसरेका डर रखते हैं। और कम ताकतवर राष्ट्र — पाकिस्तान और हिन्दुस्तान जैसे भी, अैसा ही डर रखते हैं। अिस तरह अेक-दूसरेका डर रखते हुअे शस्त्र-बलसे, सैन्य-बलसे कोअी मसला हल नहीं हो सकता, अैसे विश्वासके साथ हम शस्त्रबल और सैन्यबल पर आधार रखते हैं, अुसका आधार नहीं छोड़ सकते।

दंभ नहीं, दयाजनक अवस्था

अैसी विचित्र परिस्थितिमें हम हैं। और अगर कोअी हमें दाम्भिक कहेगा, ढोंगी कहेगा, तो वह अैसा कहनेका हकदार साबित होगा, यद्यपि अुसका कथन सही नहीं होगा। यदि हमारे दिलमें कोअी दूसरी बात है और अुसे हम छिपाते हैं, तो हम जान-बूझकर ढोंगी हैं। लेकिन जहां दिल अुस बातको कबूल करता है और परिस्थितिजन्य बुद्धि दूसरी बात कहती है, अिस वास्ते लाचारीसे कोअी बात करनी पड़ती है, तो वह दाम्भिकताकी नहीं, बल्कि दयाजनक स्थिति है। अैसी दयाजनक स्थितिमें हम हैं।

अभी राजेन्द्रबाबूने बताया कि "सर्वोदय-समाज पर यह जिम्मेवारी है, क्योंकि लोगोंको अुस समाजसे अपेक्षा है कि वह समाज अपने मूल विचार पर कायम रहे और अुसको आजकी हालतमें अमलमें लानेके लिअे वातावरण तैयार करे। अगर सर्वोदय-समाज यह करेगा, तो आजकी सरकारको, जो कि हमारी राष्ट्रीय सरकार है, अुसकी सर्वोत्तम मदद होगी। आज मान लीजिये कि हममें से कोअी मंत्री बन जाय और कुछ मंत्र करने लगे, तो अुसका वह मंत्र और अुसका वह तंत्र, दोनों

मिल करके आजकी सरकारको अुतनी मदद नहीं देगा, जितनी मदद विना सैन्य-बलके जिस तरह समाज बन सकता है, अुस दिशामें काम करनेसे वह देगा।

स्वतंत्र लोकशक्तिके निर्माणका कार्य

मुझे कभी-कभी लोग पूछते हैं कि आप बाहर क्यों रहते हैं? देशकी जिम्मेवारी आप क्यों नहीं अुठाते? तो मैं कहता हूं कि दो बैल जब गाड़ीमें लग चुके हैं वहां मैं अेक तीसरा गाड़ीका बैल बनूंगा, तो अुससे गाड़ीको क्या मदद मिलेगी? अगर मैं यह कर सकूं कि रास्ता जरा ठीक बना दूं, ताकि गाड़ी अुचित दिशामें जाय, तो अुस गाड़ीको मैं अधिक-से-अधिक मदद पहुंचा सकता हूं। हां, अेक बात जरूर है कि अगर मैं बैल ही हूं, तो मुझे बैल बनना ही चाहिये, वही काम करना चाहिये। मैं अेक विशेष भाषामें बोल रहा हूं। मैं अुम्मीद करता हूं कि आप अुस भाषाको सहन करेंगे। हमारी संस्कृतिमें बैलके लिअे जितना आदर है, अुतना मनुष्यके लिअे भी नहीं है। और अुसी अर्थमें मैं बोल रहा हूं। जो राज्यकी धुरा अुठाता है, अुसे हम धुरंधर कहते हैं। धुरंधरके मानी होते हैं बैल! धुरंधर हमें बनना पड़ता है। लेकिन जो लोग धुरंधर बन चुके हैं, वे कहते हैं कि अब आप वही काम मत करिये जो हम कर रहे हैं। अुस काममें आप मत लगिये, बल्कि जो कमियां हम महसूस करते हैं, अुनकी पूर्ति अगर आप कर सकते हैं तो करें। अैसी आशासे वे लोग हमारी तरफ देखते हैं। तो हमें यह ठीकसे समझना चाहिये और अिस दृष्टिसे, जिसे मैं स्वतंत्र लोकशक्ति कहता हूं, वह जिससे निर्माण हो, अैसे ही काममें लग जाना चाहिये। तभी हम आजकी सरकारकी सच्ची मदद करेंगे और अपने देशकी समुचित सेवा कर सकेंगे।

दंडशक्तिसे भिन्न लोकशक्ति

मैंने कहा कि 'हमें स्वतंत्र लोकशक्ति निर्माण करनी चाहिये।' मेरा अर्थ यह है कि हिंसाशक्तिकी विरोधी और दंडशक्तिसे भिन्न अैसी लोकशक्ति हमें प्रकट करनी चाहिये। आजकी हमारी जो सरकार है, अुसके हाथमें हमने दंडशक्ति सौंप दी है। अुस दंडशक्तिमें हिंसाका अेक अंश जरूर है, फिर भी हम अुसे 'हिंसा' नहीं कहना चाहते हैं। हिंसासे अुसको अलग वर्गमें रखना चाहते हैं। हम अुसे हिंसाशक्तिसे भिन्न दंडशक्ति कहना चाहते हैं, क्योंकि वह शक्ति अुनके हाथमें सारे समुदायने दी है। अिसलिअे वह हिंसाशक्ति नहीं, निरी हिंसाशक्ति नहीं, पर दंडशक्ति है। अुस दंडशक्तिका भी अुपयोग करनेका मौका न आये, अैसी परिस्थिति देशमें निर्माण करना हमारा काम होगा। वह अगर हम करेंगे तो हमने स्वधर्म पहचाना और अुस पर अमल करना जाना। अगर अैसा हम नहीं करेंगे और दंडशक्तिके अुपयोगसे ही जो जनसेवा हो सकती है अुस जनसेवाका लोभ रखेंगे, तो जिस विशेष कार्यकी हमसे अपेक्षा की जा रही है अुस कार्यको, अुस अपेक्षाको, हम पूर्ण नहीं कर सकेंगे। बल्कि संभव है कि हम बोझ-रूप भी साबित होंगे।

दयाका राज बनाना है, न कि दयाकी प्रजा

मैं कुछ थोड़ा स्पष्टीकरण कर दूं। मैंने कहा कि दंडशक्तिके आधार पर सेवाके कार्य हो सकते हैं और वैसे कार्य करनेके लिअे ही हमने राज्य-शासन चाहा है और हाथमें लिया है। और जब तक समाजको वैसी जरूरत है, अुस शासनकी जिम्मेवारी हम नहीं छोड़ना चाहते। सेवा तो अुसमें से जरूर होगी, पर वह सेवा नहीं होगी, जिससे कि दंडशक्तिका अुपयोग ही न करना पड़े, अैसी परिस्थिति निर्माण हो। मैं मिसाल दूं। लड़ाअी चल रही है। सिपाही जख्मी हो रहे हैं। अुन सिपाहियोंकी सेवामें जो लोग लगे हैं, वे भूतदयासे परिपूर्ण होते हैं। वे शत्रु-मित्र तक नहीं देखते हैं और अपनी जान खतरेमें डालकर युद्ध-क्षेत्रमें पहुंचते हैं। और अैसी सेवा करते हैं, जो केवल माता ही अपने बच्चोंकी कर सकती है। अिसलिअे वे दयालु होते हैं, अिसमें कोअी शक नहीं। वह सेवा कीमती है, यह हर कोअी जानता है। लेकिन युद्धको रोकनेका काम वे नहीं कर सकते। अुनकी दया युद्धको मान्य करनेवाले समाजका अेक हिस्सा है। जैसे अेक यंत्रमें अनेक छोटे-बड़े चक्र होते हैं, वे अेक-दूसरेसे भिन्न दिशाओंमें भी काम करते होंगे, फिर भी वे अुस यंत्रके अंग ही हैं। तो अेक ही युद्ध-यंत्रका अेक अंग है सिपाहियोंको कत्ल किया जाय और अुसी युद्ध-यंत्रका दूसरा अंग है जख्मी सिपाहियोंकी सेवा की जाय। अुनकी परस्पर विरोधी गतियां स्पष्ट हैं। अेक क्रूर कार्य है, अेक दया-कार्य है, यह हर कोअी जानता है। पर अुस दयालु हृदयकी वह दया और अुस क्रूर हृदयकी वह क्रूरता, दोनों मिल करके युद्ध बनता है। ये दोनों युद्ध बनाये रखनेवाले दो हिस्से हैं। कठोर वैज्ञानिक भाषामें बोलना है, तो युद्धको जब तक हमने कबूल किया है, तब तक चाहे हमने अुसमें जख्मी सिपाहीकी सेवाका पेशा लिया हो, चाहे सिपाहीका पेशा लिया हो, हम दोनों युद्धके गुनहगार हैं। यह मैंने अिसलिअे मिसाल दी कि सिर्फ हम दयालु कार्य करते हैं, अिसलिअे यह नहीं समझना चाहिये कि हम दयाका राज्य बना सकेंगे। राज्य तो निठुरताका है। अुसके अन्दर दया जैसे रोटीके अन्दर नमक वैसे रुचि पैदा करनेका काम करती है। जख्मी सिपाहियोंकी अुस सेवासे हिंसामें लज्जत पैदा होती है, युद्धमें रुचि पैदा होती है, परन्तु युद्धकी समाप्ति अुस दयासे नहीं हो सकती। हम लोग अिस तरहकी दयाका काम करें कि निठुरताके राज्यमें दया प्रजाके नाते रहे, निर्दयताकी हुकूमतमें दया चले, तो हमने अपना असली काम नहीं किया। अिस तरह जो काम दयाके दीख पड़ते हैं, जो काम रचनात्मक भी दीख पड़ते हैं, अुन्हें हम दया और रचनाके लोभसे व्यापक दृष्टिके बिना ही अुठा लें, तो कुछ तो सेवा हमसे बनेगी, पर वह सेवा नहीं बनेगी, जिसकी जिम्मेवारी हम पर है और जिसे हमने अपना तथा दुनियाने स्वधर्म माना है।

मनुष्यके हृदयका कानून

मैं दूसरी स्पष्ट मिसाल देता हूं। मुझे हर कोअी पूछता है कि 'आपका वजन सरकार पर भी कुछ दीखता है, तो आप यह क्यों नहीं जोर लगाते कि सरकार कोअी कानून बना दे और बिना मुआवजेके भूमि-वितरणका कोअी मार्ग खोल दे? आप अपना वजन क्यों नहीं अिस दिशामें अिस्तेमाल करते?' अैसा बहुत मर्तबा लोग मुझसे पूछते हैं। मैं अुनको कहता हूं कि 'भाअी, कानूनके मार्गको मैं रोकता नहीं हूं। अिससे ज्यादा अगर और अेक कदम आप मुझसे चाहते हैं — आपकी दिशामें, आपकी अिच्छित दिशामें — तो मैं कहता हूं कि जो मार्ग मैंने अपनाया है, अुसमें यदि मुझे पूरा यश, सोलह आने यश नहीं मिला; बारह आने, आठ आने भी मिला, तो कानूनके लिअे सहूलियत होगी। अेक तो मैं कानूनको बाधा नहीं पहुंचा रहा हूं। और दूसरे, मैं कानूनको सहूलियत दे रहा हूं। अुसके लिअे अनुकूल वातावरण बना रहा हूं, ताकि कानून आसानीसे बनाया जा सके। पर अिससे भी अेक कदम आगे मैं आपकी दिशामें जाअूं और यही रटन रटूं कि 'कानूनके बिना यह काम नहीं होगा, कानून बनाना चाहिये', तो मैं स्वधर्मविहीन साबित हूंगा। मेरा वह धर्म नहीं है। मेरा धर्म तो यह माननेका है कि बिना कानूनकी मददसे जनताके हृदयमें हम अैसे भाव निर्माण करें, ताकि कानून कुछ भी हो, लोग भूमिका बंटवारा करें। क्या किसी कानूनके कारण मातायें बच्चोंको दूध पिला रही हैं? तो मनुष्यके हृदयमें कोअी अैसी शक्ति होती है, जिससे अुसका जीवन समृद्ध होता है। मनुष्य प्रेम पर

भरोसा रखता है, प्रेमसे पैदा हुआ है, प्रेमसे पलता है और आखिर जब दुनियाको छोड़कर जाता है, तब भी प्रेमकी ही निगाहसे जरा अिर्दगिर्द देख लेता है और अुसके प्रेमी-जन अगर अुसके दर्शनमें आते हैं, तो सुखसे देहको, दुनियाको छोड़कर वह जाता है। तो प्रेमकी शक्तिका अिस तरह अनुभव होते हुअे भी अुसको अधिक सामाजिक स्वरूपमें विकसित करनेकी हिम्मत रखनेके बजाय मैं अगर कानून-कानून रटता रहूं, तो जनशक्ति निर्माण करके सरकार हमसे जो मदद अपेक्षित करती है, वह मदद मैंने दी, अैसा नहीं होगा। अिसलिअे दंडशक्तिसे भिन्न मैं जनशक्ति निर्माण करना चाहता हूं। और हमें वह निर्माण करनी चाहिये। यह जो जनशक्ति हम निर्माण करना चाहते हैं, वह दंडशक्तिकी विरोधी है, अैसा मैं नहीं कहता। वह हिंसाकी विरोधी है। लेकिन मैं अितना ही कहता हूं कि वह दंडशक्तिसे भिन्न है।

(अपूर्ण)

हरिजनसेवक

२ मअी १९५३

भूदान-यज्ञ और शोषण-निवारण

वाचकोंसे प्रार्थना है कि वे मेरा ता० ४–४–'५३ के 'हरिजन'में छपा 'भूदान-आन्दोलन' नामक लेख फिरसे देखें। अुसमें मैंने श्री नारगोलकरके सवालका जिक्र किया था। वह लेख पढ़कर वे मुझे लिखते हैं कि अुससे अुनका समाधान नहीं हुआ। और अपने सवालके अुस हिस्सेकी ओर वे मेरा ध्यान खींचते हैं, जहां पर अुन्होंने कहा था कि, "बेजमीन किसानको भूदानसे कोअी सफलता या आनन्द प्राप्त हुआ, अैसा नहीं लगता है। जो चीज अन्यायसे अुससे छीन ली गअी थी, अुसको वापस लेनेके लिअे अुसे कोशिश करनेकी जरूरत नहीं पड़ती है। . . . बिना प्रयत्नसे मिली हुअी चीजकी ग्रहीताकी नजरमें कोअी कीमत नहीं होती। अितना ही नहीं, अिससे वह अपनी प्रगतिकी और व्यक्तित्वके विकासकी शक्ति खो बैठता है।"

और वे आगे बताते हैं कि, "जमीन छुड़वानेकी आज जो कोशिश हो रही है, अुसमें भूमिहीनको कुछ भी स्थान नहीं — अिस मेरे आक्षेपका कोअी जवाब ही नहीं देता, अैसा मुझे बार-बार लगता है।"

और मिसालके तौर पर वे बताते हैं कि, "स्वातंत्र्य-युद्धमें आम जनताने कितना सहयोग दिया था। अिसका कारण यह था कि सहयोगके लिअे अुनको अुस आन्दोलनमें काफी अवसर मिलता था।" वे लिखते हैं: "मैं १९४२ में बम्बअीमें था। जब पुलिस भीड़के अूपर धुआं-बारूदका अुपयोग करती थी, तो मकानोंमें अूपरकी मंजिलोंमें रहनेवाली स्त्रियां पानीकी बालटियां भर भरकर नीचे फेंकती थीं। कितना छोटा काम! लेकिन अिससे अुन सबको सत्याग्रह आन्दोलनमें भाग लेनेका आनन्द और समाधान मिलता था।" और आगे कहते हैं, "अैसा कुछ भी अवकाश अिस आन्दोलनमें भूमिहीनके लिअे नहीं रखा गया है।"

श्री नारगोलकरकी शंका और ज्यादा साफ हो सके, अिसलिअे मैंने कुछ लम्बाअीसे अुनके पत्रका जिक्र किया। अुनकी अिस शंकाको मैं ठीक समझा था और अुसका अुत्तर भी मैंने अपने अूपर बताये हुअे लेखमें देनेकी चेष्टा की थी, अैसा मैं मानता हूं। अुसमें मैंने कहा था कि अगर भूदान-आन्दोलनमें दान देनेके सिवा और कुछ न हो, तो बेजमीन किसान मूक ग्रहीताका ही काम करेगा; कुदरती तौर पर अुसकी और कोअी हैसियत हो ही नहीं सकती। लेकिन मैंने अपने जवाबमें यह बतानेकी चेष्टा की थी कि अिस यज्ञकी पूर्णता भूमि लेने और देनेकी दोनों क्रियायें मिलकर होती है। देनेवाला समझे कि मैं दान देकर कोअी अुपकार या मेहरबानी नहीं लेकिन प्रायश्चित्त करता हूं। और पानेवालेको चाहिये कि वह जमीन पाकर अुसका पूरा फायदा अुठानेके लिअे अपनेको तैयार करे। यानी अुसको भी अपनी आत्म-शुद्धि करनी है। श्री नारगोलकरकी यह बात हम मान लें कि लोगोंसे भूमि अन्यायसे छीन ली गअी थी। लेकिन यहां सवाल यह है कि अब जमीन ठीक न्यायसे कैसे बांटी जाय? जो बेजमीन हैं, अुनको जमीन कैसे मिले? यह परिवर्तन सत्य और अहिंसासे कैसे हो सकेगा? यह सोचते हुअे हम देखते हैं कि यदि भूमिहीन अपने शोषण-कार्यमें अपनी तरफसे सहकार नहीं देंगे, तो अुनका शोषण जारी नहीं रहेगा। जमीनवाले भी जमीनसे पैदाअिश चाहते हैं; अिसलिअे अुनको किसानों और मजदूरोंका सहकार मिलना चाहिये। यह सहकार मिलता है, अिसीलिअे वे लोग अपनी जमीनकी मालिकीके दावेसे बेजमीन श्रमजीवियोंका शोषण करते रहते हैं। यदि बेजमीन श्रमजीवी वर्ग यह समझ जाय कि हमारे सहकारके बिना जमीनवाले शोषण नहीं कर सकते और अिस तरह वे अपने शोषणको रोक सकते हैं, तो हमको सवालका अहिंसक हल मिल गया। जैसे कि गांधीजीने अपने 'आर्थिक समानता' नामक लेखमें ('हरिजनसेवक', ११–४–'५३) बताया है: "कोअी धनवान (यहां पर हम जमीन-मालिक भी मान लें) गरीबोंके सहकारके बिना धन नहीं कमा सकता। मनुष्यको अपनी हिंसक शक्तिका भान है। . . . मगर अहिंसक शक्तिका भान भी धीरे-धीरे किन्तु अचूक रीतिसे बढ़ने लगा। यह भान गरीबोंमें प्रसार पा जाये, तो वे बलवान बनें और आर्थिक असमानताको, जिसके कि वे शिकार बने हुअे हैं, अहिंसक तरीकेसे दूर करना सीख लें।"

अिस परसे मालूम होगा कि भूमिदान-यज्ञ सचमुच हिन्दुस्तानका जमीनका सवाल हल करनेका अेकमात्र अहिंसक मार्ग है और अिसमें भूमिहीनोंके लिअे भी अपने संगठनका कार्यक्रम भरा पड़ा है। रचनात्मक कार्यक्रमके जरिये हमें अिन लोगोंका ठोस संगठन करना चाहिये। अुसमें जो अहिंसक क्रांतिकी संभावना और शक्ति है, अुसका अुन्हें दर्शन कराना चाहिये। अुसी खयालसे मैंने कहा था कि भूदानका अुनके (बेजमीनोंके) लिअे भी अेक सन्देश है। और वह यह है कि वे भी जग जायं और समझ लें कि हमें खेती और घरेलू अुद्योग-धन्धोंके समन्वयवाली विकेन्द्रित और स्वावलम्बी अर्थ-रचनामें बुद्धिपूर्वक सहयोग देना है, जिसकी स्थापना भूदान-आन्दोलन भारतमें करना चाहता है।

परन्तु शायद यह अुत्तर श्री नारगोलकरको पसन्द नहीं आया या फिर समझमें नहीं आया। शायद अुनका खयाल अैसा हो कि बेजमीनोंके लिअे कुछ और काम सोचना चाहिये, जिसके जोरसे अुन्हें भूमि मिलने लगे — यानी जमीन-मालिकोंको अपनी भूमि देनी पड़े। यदि मेरी यह धारणा सही हो, तो अुनका यह खयाल ठीक नहीं है। श्री विनोबाने बार-बार यह घोषित किया है कि वे अपना काम कानूनके या और किसी हिंसक बल पर नहीं करना चाहते। अिसीमें अुसकी खूबी है। और यही देखकर सब पक्षके लोगोंने अिस कार्यक्रमको पसन्द किया है।

श्री नारगोलकरका पत्र मिलनेके बाद अुनसे मिलनेका भी मौका मुझे मिला। अुन्होंने बताया और अिस बातसे वे हैरान थे कि बम्बअी-राज्यमें जमीन-मालिक खुद जोतनेके बहाने काश्तकारोंसे जमीनें छीन रहे हैं। अुनका यह भी कहना है कि अेक तरफसे जमीन-मालिक अपनी थोड़ी जमीन भूदान-यज्ञमें देकर प्रतिष्ठा पा रहे हैं और दूसरी तरफ अपने काश्तकारोंसे कानूनन् छठा हिस्सा लेनेके बजाय ज्यादा वसूल कर रहे हैं, जैसी कि

अुनकी पुरानी नीति थी। अैसी फरियाद सूरत और खेड़ा जिलेसे भी सुननेमें आअी है। संभव है कि वह सही हो। बम्बअी-राज्यका कानून काश्तकारको चंद हक देता है। अुसको जमींदार निकाल नहीं सकता, सिवा कि वह खुद जमीन जोतना चाहे। और अिसके लिअे भी अेक मियाद बनी है, जिससे ज्यादा जमीन वह नहीं ले सकता। यदि जमींदार अपनी जमीन बेचना चाहे, तो पहला खरीदनेका हक काश्तकारको रहेगा। और भी अिस तरहके हक बम्बअी-राज्यमें कानूनसे किसानोंको दिये गये हैं। मैंने अूपर जो गिनाये, सो मिसालकी तौर पर हैं। किसान अिस कानूनका फायदा जरूर अुठा सकते हैं। लगानके रूपमें वे छठे हिस्सेसे ज्यादा न दें। अिसका फायदा यदि किसान अुठाना चाहें, तो वे संगठित रूपसे बलवान बनकर अुठा सकते हैं। परंतु जैसे अस्पृश्यता-निवारणका कानून बनने पर भी दूर-दूर देहातोंमें वह सिद्ध नहीं हुआ, वैसा अिस कानूनका भी हो सकता है। धनी लोग जहां तक अुनका बस चलेगा गरीबी और बेकारीका फायदा लेना नहीं छोड़ेंगे। परन्तु अिसके मानी यह नहीं कि कानूनका अमल न हो। जरूर होना चाहिये। अिसके लिअे अेक ही रास्ता है। यदि सरकार और कार्यकर्ता लोग दोनों मिलकर धैर्यसे किसानोंमें काम करते रहें, तो यह अुनके संगठित शांत बलसे बननेवाली चीज है। यह अेक बड़ा भारी कार्य बेजमीनोंको करना है, जिसका जिक्र मैंने संक्षेपमें अपने पिछले लेखमें किया था।

कार्यकर्ता लोग यदि अिस दृष्टिसे अपना काम आगे बढ़ावें, तो अुन्हें पता चलेगा कि कैसे भूदान-यज्ञमें क्रांतिके बीज पड़े हैं। यह क्रांति अहिंसक होगी, सत्य-परायण होगी, यह हमें भूलना नहीं चाहिये।

२६-४-'५३ **मगनभाअी देसाअी**

गांधीवाद

अगर गांधीवाद संकुचित पंथवादका ही दूसरा नाम है, तो वह मिटा देनेके काबिल है। मरनेके बाद अगर मुझे मालूम हो कि मैंने जिन चीजोंकी हिमायत की थी वे बिगड़कर पंथवाद बन गयी हैं, तो मेरी आत्माको गहरी चोट पहुंचेगी। हमें तो चुपचाप काम करते जाना है। कोअी यह न कहे कि मैं गांधीका अनुयायी हूं। मैं अपना ही अनुयायी बन जाअूं तो बहुत है। मैं जानता हूं कि मैं अपना कितना अपूर्ण अनुयायी हूं। क्योंकि मैं जिन विश्वासोंकी हिमायत करता हूं, अुन पर पूर्ण अमल नहीं कर पाता हूं। आप लोग अनुयायी नहीं हैं, बल्कि स्वाध्यायमें, धर्मयात्रामें, सत्यकी शोधमें और सेवाकार्यमें मेरे साथी हैं।

हमें सत्य और अहिंसाको केवल व्यक्तियोंके ही अमलकी चीज नहीं बनाना है, बल्कि अैसी चीज बनाना है जिस पर समूह, जातियां और राष्ट्र भी अमल कर सकें। कम-से-कम मैं तो यही सपना देखता हूं। मैं तो अिसीको सच्चा करनेके लिअे जीता हूं और अिसीकी कोशिश करते हुअे मरूंगा। मेरी श्रद्धा मुझे नित-नये सत्य खोज निकालनेमें मदद देती है। अहिंसा आत्माका गुण है और अिस कारण हर व्यक्तिको जीवनकी सब बातोंमें अुस पर अमल करना चाहिये। अगर अुसका आचरण हर क्षेत्रमें नहीं हो सकता, तो अुसका व्यावहारिक मूल्य कुछ नहीं।

अिसमें झूठे बड़प्पन या सज्जनताके अभिमानका डर हमेशा रह सकेगा। अिसलिअे आप अपनेको गांधी-सेवा-संघका सदस्य कहनेकी बजाय यही क्यों न करें कि सत्य और अहिंसाको हरअेक घरमें पहुंचायें और आप जहां भी हों, वहां सत्य और अहिंसाके ही वैयक्तिक प्रतिनिधि बनकर रहें।

('हरिजन', २-३-'४०) **मो० क० गांधी**

दक्षिण अफ्रीकामें सत्याग्रह

[दक्षिण अफ्रीकामें रंगीन लोग वहांके गोरे राज्यके संगठित बलके सामने जो शांतिपूर्ण और अहिंसक प्रतिकार कर रहे हैं, वह केनियाके माअू-माअू आन्दोलनसे बिलकुल भिन्न है और यह अत्यन्त स्वागत योग्य है। अिस माअू-माअू आन्दोलनके बारेमें पाठकोंने ब्रिटिश पार्लियामेन्टके सदस्य श्री फेनर ब्रॉकवे जैसे शांति-प्रेमी सज्जनकी कलमसे लिखा लेख 'हरिजन' के पिछले अंकमें अवश्य पढ़ा होगा। दक्षिण अफ्रीकाका आन्दोलन हमारे विशेष आकर्षण, मदद और सहानुभूतिका अधिकारी है, क्योंकि वह गांधीजीके दक्षिण अफ्रीकाके अुस आन्दोलनसे अैतिहासिक सम्बन्ध रखता है और अुसीकी आध्यात्मिक विरासत अिसे मिली है, जिसने दुनियाको सत्याग्रहका अनोखा हथियार दिया। वर्तमान आन्दोलन अब दो साल पुराना हो गया है और यह अीश्वरकी कृपा है कि जातीय नफरत और वैरकी बुनियादी भावनासे पैदा हुअी बहुत बड़ी कठिनाअियों और रुकावटोंके बावजूद अुसकी गति और विस्तार बढ़ रहा है। अिस दो साल पुरानी कहानीका सार अिंग्लैंडके 'वार रेज़िस्टर' नामक पत्रके वसंतकालीन अंक (१९५३) से नीचे दिया जाता है। आशा है अिससे पाठकोंको अपना ध्यान अिस आन्दोलन पर केन्द्रित करनेमें मदद मिलेगी। अिसमें केनियाके आन्दोलनकारियोंके लिअे भी अेक सबक है, जिस पर अुन्हें खुद अपने और मानव-जातिके कल्याणके खातिर ध्यान देना चाहिये। क्योंकि आतंक और दुर्भाग्यसे अुसके द्वारा भड़काया जाने-वाला प्रति-आतंक — दोनोंको आधुनिक सभ्य जगतसे देशनिकाला दे दिया जाना चाहिये और जंगली करार देना चाहिये, भले वह राज्यकी ओरसे फैलाया जाय या प्रजाकी ओरसे।

१८-४-'५३ — **म० प्र०**]

खुशीकी बात है कि लड़ाअीका विरोध करनेवाले लोगोंकी आन्तरराष्ट्रीय संस्था (वार रेज़िस्टर्स अिन्टरनेशनल) के सामने दक्षिण अफ्रीकाके सत्याग्रहके महत्त्व और मूल्यकी चर्चा करनेके लिअे मुझसे कहा गया है। मैं अिस बातको सबसे बड़ा महत्त्व देता हूं कि हम २६ जून, १९५२ को शुरू हुअे अिस आन्दोलनको समझें और अुसका मजबूतसे मजबूत समर्थन करें।

दिसम्बर १९५१ में हुअे अपने ३९वें वार्षिक सम्मेलनमें अफ्रीकन नेशनल कांग्रेसने दक्षिण अफ्रीकाकी भारतीय कांग्रेसके सहयोगसे अन्यायपूर्ण कानूनोंके खिलाफ सामूहिक आन्दोलन शुरू करनेका निर्णय किया। कांग्रेसके अध्यक्ष डॉ० मोरोकाने डॉ० मलानको लिखा कि अगर कुछ अैसे कानून, जो "लोकतंत्रकी भावनाके खिलाफ, अन्यायपूर्ण, पक्षपात करनेवाले और मनुष्यके स्वाभाविक अधिकारोंके खिलाफ हैं," २९ फरवरी, १९५२ के पहले रद्द न कर दिये गये, तो अुन्हें अिन कानूनोंके विरोधमें आन्दोलन शुरू करना होगा। डॉ० मलानका लम्बा और सोच-विचार कर दिया हुआ जवाब २९ जनवरीको प्रकाशित हुआ था। अुन्होंने कहा कि "युरोपियनों और अफ्रीकनोंमें भेद करनेवाले लम्बे समयसे चले आ रहे कानूनोंको" रद्द करनेका सरकारका कोअी अिरादा नहीं है। डॉ० मोरोकाके तीन मुद्दोंका जवाब देते हुअे डॉ० मलानने कहा:

१. "मेरे विचारसे आप यह महसूस करेंगे कि (बन्टू और युरोपियनोंके बीचके) ये भेद सनातन हैं, मनुष्यके पैदा किये हुअे नहीं हैं।"

२. "आपकी यह मांग है कि यूनियन अैसा राज्य न रहे, जिस पर युरोपियनोंका शासन हो।... अिस तरह जातीय मेल और समन्वय नहीं पैदा किया जा सकता। अैसी मांगोंको स्वीकार करना अनिवार्य रूपसे आबादीके सारे वर्गोंके लिअे सर्वनाशको न्योतना है।"

३. "आपका तीसरा मुद्दा यह है कि जातीय भेद करनेवाले कानून प्रजाका दमन और अपमान करनेवाले हैं। आपकी यह बात भी बिलकुल गलत है।"

डॉ० मोरोकाने १८ फरवरी, १९५२ को अिसके जवाबमें लिखा कि:

"प्रस्तुत प्रश्न नसलके भेदका नहीं, बल्कि नागरिकताके अधिकारोंका है, जो मनुष्य द्वारा बनाये गये और कृत्रिम तौर पर लादे गये कानूनों द्वारा प्रजाके अेक भागको तो पूरे-पूरे दिये गये हैं, जबकि दूसरे भागको बिलकुल नहीं दिये गये हैं। अिन कानूनोंको लादनेका अुद्देश्य स्वतंत्र समाजके नाते युरोपियनोंकी अेकरूपता कायम रखना नहीं, बल्कि अफ्रीकी लोगोंका व्यवस्थित शोषण जारी रखना है। . . .

"अफ्रीकन नेशनल कांग्रेस जो सामूहिक आन्दोलन शुरू करनेका अिरादा रखती है, अुसके सम्बन्धमें हम यह बताना चाहेंगे कि अरक्षित और मतदानके अधिकारसे वंचित लोगोंके नाते हमने अिस अन्यायको दूर करनेके दूसरे रास्ते खोजे, लेकिन अुसमें हमें सफलता नहीं मिली।

"अैसी हालतमें अफ्रीकी लोगोंके सामने सामूहिक आन्दोलन शुरू करनेके सिवा दूसरा कोअी रास्ता ही नहीं रह गया है। हम दृढ़तापूर्वक यह कहना चाहते हैं कि हमारी मंशा शांतिपूर्ण ढंगसे यह आन्दोलन चलानेकी है, और अगर अिसमें कोअी गड़बड़ी पैदा हुअी तो वह हमारी पैदा की हुअी नहीं होगी। सीधे प्रतिनिधित्वके अपने दावेको दोहराते हुअे हम अपना यह पक्का निश्चय प्रगट करना चाहते हैं कि पूर्ण नागरिकताके अधिकारोंकी प्राप्तिके लिअे हम दूना प्रयत्न करेंगे।"

'आन्दोलन' २६ जूनको शुरू हुआ। अिसकी तैयारीके रूपमें मुख्य मुख्य शहरोंमें सामूहिक प्रदर्शन किये गये। कांग्रेसका यह दावा था कि अिसके लिअे १० हजार स्वयंसेवक प्राप्त कर लिये गये हैं। २० जूनको अेक्शन कमेटीने यह विज्ञप्ति निकाली :

"२६ जूनको अन्यायपूर्ण कानूनोंके खिलाफ शुरू होनेवाले आन्दोलनमें केवल अैसे ही गैर-युरोपियन भाग लें, जो अफ्रीकन नेशनल कांग्रेस और दक्षिण अफ्रीकाकी भारतीय कांग्रेसकी अेक्शन कमेटी द्वारा नामजद किये गये हों। अनुशासनमें रहनेकी तालीम पाये हुअे 'सक्रिय स्वयंसेवक' ही यह आन्दोलन हाथमें लेंगे। दूसरे कोअी लोग सार्वजनिक रूपमें कानून तोड़नेमें भाग न लें। सारे गैर-युरोपियन हमेशाकी तरह अपने-अपने काम पर जायं, क्योंकि आम हड़ताल करनेकी आज्ञा नहीं की गअी है।"

आन्दोलनकी योजना भी घोषित कर दी गअी थी। अुसमें तीन अवस्थायें बताअी गअी थीं :

१. चुने हुअे और तालीम पाये हुअे व्यक्ति कुछ बड़े शहरोंमें आन्दोलन करें।

२. स्वेच्छासे विरोध करनेवाले लोगोंके सुसंगठित दल बड़े शहरोंमें आन्दोलन चलायें।

३. जब नेता कार्यके रूपमें अहिंसक विरोधका अुदाहरण पेश कर चुकें, तब अिस आन्दोलनको शहरों और गांवोंमें सामूहिक आन्दोलनका रूप दिया जाय।

यह आन्दोलन (अब अपनी दूसरी अवस्थामें) पिछले छः महीनोंसे चल रहा है और ८ हजारसे अधिक स्त्री-पुरुष अुसमें शरीक हुअे हैं और कैद किये गये हैं। लन्दनके 'अिकॉनामिस्ट' पत्रके जोहानिसबर्गके रिपोर्टरके अनुसार सत्याग्रहियोंका व्यवहार बिलकुल 'निर्दोष' रहा है। मजिस्ट्रेटों और पुलिसने भी व्यवस्थित ढंगसे काम किया है। किसी पर ज्यादतियां नहीं की गअीं। सत्याग्रहियों पर "परवाना लेनेके कानून तोड़नेका, परवाने न दिखा सकनेका, डाकखानों और रेलवे स्टेशनोंमें 'केवल युरोपियनोंके ही लिअे' लिखे हुअे रास्तोंसे प्रवेश करनेका, कर्फ्यूके नियम भंग करनेका और निषिद्ध हिस्सोंमें प्रवेश करनेका" अभियोग लगाया जाता है। सजायें देनेमें भी संयम रखा जाता है — आम तौर पर २० दिनकी कैदके साथ दो पौंड जुर्माना किया जाता है, हालांकि कुछ लोगोंको तीन माहकी कैदकी सजा भी दी गअी है और कम अुमरके सत्याग्रहियोंको बेतकी सजा दी गअी है।

लन्दनके 'टाअिम्स' पत्रने अपने १६ अगस्तके अंकमें छपे 'दक्षिण अफ्रीकामें अनिश्चितताकी हालत' नामक अग्रलेखमें दक्षिण अफ्रीकाकी मौजूदा राजनैतिक गड़बड़ीमें अिस आन्दोलनका महत्त्व आंकते हुअे लिखा है: "अभी तक आन्दोलनकारियों या पुलिसने बहुत कम या बिलकुल हिंसा नहीं की है। हर पक्ष यह समझता मालूम होता है कि जो भी पहले पशुबल या हिंसाका आश्रय लेगा, वह नैतिक लाभ दूसरेके हाथमें दे देगा; अुसे दुनियाका नैतिक समर्थन नहीं मिलेगा। अैसे चिन्ह दिखाअी देते हैं कि शासन पर अिसका तनाव पड़ने लगा है।"

तनाव और सफलताके ये चिन्ह नीचे दिये जाते हैं:

१. अगाथा हेरिसन (अेक अंग्रेज क्वेकर)को डॉ० जेड० के० मेथ्यूज द्वारा कही गअी अेक नदी पर बांधे हुअे दो पुलोंकी घटना, जिनमें से अेक गोरोंके लिअे और दूसरा कालोंके लिअे है। अेक दलने कानूनका भंग किया (वे जो कुछ करनेवाले थे अुसकी पूर्व सूचना देकर) और वे गिरफ्तार कर लिये गये। दूसरोंने अुनकी जगह ली और अन्तमें यह प्रतिबन्ध अुठा दिया गया।"

२. २८ अगस्तको केपटाअुनके अेक मजिस्ट्रेटने "अन्यायपूर्ण कानूनोंका भंग करनेवाले" अेक अफ्रीकीको निर्दोष घोषित किया, जिस पर ३ अगस्तको केपटाअुन स्टेशन पर अेक युरोपियन विश्राम-गृहमें बैठनेका अभियोग लगाया गया था। मजिस्ट्रेटने कहा कि पहले और दूसरे दर्जेके गैर-युरोपियन मुसाफिरोंके लिअे वहां विश्राम-गृहका कोअी प्रबन्ध नहीं था। गैर-युरोपियन विश्रामगृहोंका साज-सामान भी युरोपियनोंके विश्रामगृहोंसे "बहुत घटिया" था।

३. लेकिन सबसे ज्यादा महत्त्वकी रिपोर्ट ५ नवम्बरके 'टाअिम्स' (लन्दन)में छपी थी, जो अुसके प्रिटोरियाके प्रतिनिधिने भेजी थी :

"नेटालमें कर्फ्यूके नियमोंका भंग करनेवाले अफ्रीकी सत्याग्रहियोंसे निबटनेके लिअे पुलिस नया तरीका अख्तियार कर रही है। नीति यह है कि जब तक अैसे प्रदर्शनकारी शांतिपूर्ण बने रहें, तब तक अुनकी अुपेक्षा की जाय।

"कानून-भंगके आन्दोलनने दक्षिण अफ्रीकाकी पुलिसका काम काफी बढ़ा दिया है और अधिकारी यह मानने लगे हैं कि वे सत्याग्रहियों पर अितना समय नहीं बिगाड़ सकते; अिसके बजाय अुन्हें अपनी शक्ति गुनाहों और हिंसाको रोकनेमें खर्च करनी चाहिये।"

दक्षिण अफ्रीकाके मजिस्ट्रेटों और जजोंकी यह कार्रवाअी दक्षिण अफ्रीकाके मौजूदा अितिहासमें बहुत बड़ा महत्त्व रखती है; और वह सत्याग्रहियोंको दी गअी मामूली सजाओंमें तथा मौजूदा सरकार और अदालतोंके बीच वैधानिक प्रश्नों पर चलनेवाले झगड़ेमें दिखाअी देती है। पिछले अगस्तमें सरकारने सत्याग्रहके नेता डॉ० मोरोका और डॉ० दादू तथा कार्यकारिणीके दूसरे १८ सदस्यों पर अनिश्चित व्याख्यावाले 'सप्रेशन ऑफ कम्युनिस्म अेक्ट' (साम्यवादको दबानेवाला अेक्ट)के मातहत मुकदमा चलानेका निर्णय किया था। अुन पर यह आरोप लगाया गया कि रंगभेदके कानूनों और नियमोंकी खुली अवहेलना करके वे लोग अवैधानिक और अव्यवस्थित साधनोंसे देशके औद्योगिक और सामाजिक संगठनको बदल देना चाहते हैं। दिसम्बरमें ट्रान्सवालकी अदालतने अिस मामलेमें

अपना फैसला दिया। न्यायाधीश रम्फने अुनमें से हरअेकको ९ माहकी कैदकी सजा दी। लेकिन अिस शर्त पर वे सजायें दो सालके लिअे मुल्तवी कर दी गअीं कि आगे वे अिस अेक्टके खिलाफ कोअी गुनाह नहीं करेंगे। अपने फैसलेमें न्यायाधीशने कहा, "मेरी रायमें ये मुलजिम अेक अैसी योजनाको बढ़ावा देनेके अपराधी हैं, जो अैसे साधनोंसे — जिनमें गैरकानूनी काम या यूनियनके कुछ कानूनों और म्युनिसिपैलिटीके नियमोंका भंग भी शामिल है — अेक्टके अर्थमें राजनैतिक, औद्योगिक, सामाजिक या आर्थिक परिवर्तन करनेका ध्येय रखती है।" जजने कहा कि सारे मुलजिम जिस अपराधके दोषी पाये गये हैं, वह "वैधानिक साम्यवाद" है। अिस अभियोगका आजके आम तौर पर जाने हुअे साम्यवादसे कोअी सम्बन्ध नहीं है। अुन्हें अपील करनेकी अिजाजत दी गअी। ('साअुथ अफ्रीका', ६-१२-'५२)

२८ नवम्बरको सरकारने अेक आज्ञा निकाली, जिसमें अफ्रीकनोंको कानून तोड़नेके लिअे भड़काने और दससे ज्यादा अफ्रीकनोंकी सभा करनेको गुनाह माना गया; और अिसकी सजा तीन सालकी कैद या ३०० पौंड तकका जुर्माना बताअी गअी। अिसके जवाबमें युरोपियनोंकी ओरसे यह घोषणा की गअी कि कानून-भंगके आन्दोलनमें अब युरोपियन लोग भी पैट्रिक डंकनके नेतृत्वमें भाग लेंगे। अिसके लिअे सावधानीसे तैयारी की गअी थी और ८ दिसम्बरको ('टाअिम्स'की रिपोर्ट) रंगभेदके अन्यायपूर्ण कानूनोंके खिलाफ किये जानेवाले आन्दोलनमें भाग लेनेके लिअे जोहानिसबर्गमें ७ युरोपियनोंको गिरफ्तार किया गया। अुन्होंने जर्मिस्टन नामकी अफ्रीकन बस्तीमें प्रवेश किया और वहां अफ्रीकनोंकी अेक सभा की। अिन युरोपियनोंके साथ, जो कानून-भंग आन्दोलनमें भाग लेनेवाले पहले गोरे थे, १४ अफ्रीकन और १८ भारतीय थे, जिनमें मणिलाल गांधी भी शरीक थे। अिन सबको भी गिरफ्तार कर लिया गया।

> "बस्तीमें प्रवेश करनेके कुछ ही मिनट बाद लगभग १००० गाते हुअे अफ्रीकनोंका झुण्ड अिस दलके पीछे हो लिया। अिस जुलूसके साथ पुलिसकी वायरलैस गाड़ियां और खुफिया-विभागकी विशेष शाखाके सदस्य थे। मि० डंकनने अंग्रेजी और सेसुटो दोनों भाषाओंमें बोलते हुअे अफ्रीकनोंसे कहा: 'आज दक्षिण अफ्रीकाके हर तरहके लोग आपके बीच आ गये हैं। वे आपके लिअे प्रेम और शांतिकी सौगात लेकर आये हैं। मैं चाहता हूं कि आप जो कुछ भी करना है बिना कोअी बखेड़ा खड़ा किये और प्रेमकी भावनासे करें।'"
> ('टाअिम्स', ९-१२-'५२)

आज भी अिस नये आन्दोलनकी कीमत आंकना जल्दी कहा जायगा। अेक साल पुराने प्रतिकार-आन्दोलनकी कीमत आंकना भी जल्दी ही होगा। लेकिन यह बहुत साफ है कि दक्षिण अफ्रीकाके जीवन और विचारके अनेक वर्गोंको अन्तरात्माकी अिस अपील द्वारा नये विचार और नये काम करनेकी प्रेरणा मिली है।

दक्षिण अफ्रीकाके चर्चोंकी कौंसिल अेक राष्ट्रीय सम्मेलन बुलानेका अनुरोध करती है, जिसमें सब जातियोंके प्रतिनिधि अिकट्ठे हों। अिस सम्मेलनका अुद्देश्य अैसे अुपाय खोज निकालना होगा, जिनसे देशके जीवनमें सारे जातीय दलोंका सहकार सिद्ध किया जा सके। जातीय सम्बन्धोंसे सम्बन्धित संस्था (अिन्स्टिटचूट ऑफ रेशियल रिलेशन्स) की अपील है कि देशकी सरकार और अफ्रीकन नेताओंका अेक सम्मेलन बुलाया जाय। धार्मिक और सामाजिक नेताओंके अेक 'अुदार दल'ने समान अधिकारोंकी अुदार नीति पर जोर दिया है। डच रिफार्म्ड चर्चने अिस समस्या पर चर्चा करनेके लिअे चर्चोंके सारे नेताओंकी अेक कान्फरेन्स बुलानेकी घोषणा की है।

प्रिटोरियाके 'दि फ्रेन्ड' नामक पत्रकी रिपोर्टके मुताबिक ब्लोमफाअुन्टेनके बिशपने अभी हालमें अपनी धर्मसभाके सामने प्रवचन करते हुअे दक्षिण अफ्रीकाके सत्याग्रहका विशेष अुल्लेख किया। अुन्होंने कहा कि अीसाअियोंके लिअे यह अेक बुनियादी सिद्धान्त है कि वे सार्वजनिक व्यवस्थाको खतरेमें न डालें; हां, अैसे कानूनको तोड़नेकी बात अलग है, जो नैतिक सिद्धान्तोंके खिलाफ हो। अीसाअी शासक जिन लोगों पर शासन करते हैं, अुन पर अैसे कानून लादना, जो मनुष्यकी स्वाभाविक प्रतिष्ठा और स्वतंत्रताको सीमित और अपमानित करते हैं और जिनका मुख्य असर निर्दोष कैदियोंसे जेलोंको खचाखच भर देना है, शासकोंका अन्याय है और अुनकी अीसाअियतके खिलाफ है।" चर्चोंकी विश्व-कौंसिलकी केन्द्रीय समितिकी घोषणामें दुनियाकी रायका सबूत भी हमें मिलता है। चिचेस्टरके बिशपकी अध्यक्षतामें केन्द्रीय समितिकी लखनअूमें ता० ३१-१२-'५२ से ता० ८-१-'५३ तक जो बैठक हुअी, अुसमें समितिने अिस बात पर जोर दिया कि "किसी भी जगह जाति या नसलके आधार पर प्रचलित सारे राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक भेदभाव अीसाअी धर्मशास्त्रोंमें बताअी गअी अीश्वरीय अिच्छाके खिलाफ हैं। अैसा समझकर कि मौजूदा जातीय भेदभाव दुनियाके विभिन्न हिस्सोंमें संघर्ष और कड़वाहटको बढ़ा रहा है, समिति सारे सदस्य चर्चोंसे अनुरोध करती है कि वे जातियोंमें मेलमिलाप और समझौता करानेकी अीसाअी सेवामें लग जायं और जहां कहीं अैसा भेदभाव हो, अुसे दूर करनेका यथाशक्ति प्रयत्न करें।"

अिस अहिंसक प्रतिरोधकी पद्धति यह है कि अन्यायके शिकार हुअे लोग अन्यायपूर्ण कानूनोंको तोड़नेकी कानून द्वारा दी हुअी सजाको स्वेच्छासे स्वीकार करके दमन करनेवालोंकी अन्तरात्मासे अपील करते हैं।

सत्याग्रहियोंके सम्बन्ध पुलिसके साथ मैत्रीपूर्ण हैं। जब कभी अहिंसक प्रतिकारकी योजना बनाअी जाती है, तब पुलिसको सूचना की जाती है और पुलिसका अुत्तर भी मैत्रीपूर्ण होता है। मजिस्ट्रेट और जज भी 'मैत्रीपूर्ण' रहे हैं; अुन्होंने सत्याग्रहियोंको बहुत हलकी सजायें दी हैं और अितनी तादादमें लोगोंको निर्दोष घोषित करके छोड़ दिया है कि ताज्जुब होता है।

मेरा विश्वास है कि अब चूंकि दक्षिण अफ्रीकाके प्रसिद्ध गोरे लोग भी अिस आन्दोलनमें शामिल हो गये हैं, आन्दोलन-समिति आगे बढ़नेका पहलेसे कहीं ज्यादा दृढ़ निश्चय करेगी और मलान सरकारको अुसे तोड़नेमें ज्यादा हिचकिचाहट महसूस होगी। अफ्रीकन नेशनल कांग्रेसके नये सभापति मुखिया अेल्बर्ट लुथुलीने दिसम्बर १९५२ में जोहानिसबर्गमें हुअे कांग्रेसके ४० वें अधिवेशनमें कहा कि मेरी नीति पशुबल या हिंसाका कभी आश्रय न लेनेकी, ज्यादा युरोपियनोंको स्वेच्छासे आन्दोलनमें शरीक होनेका निमंत्रण देनेकी और मेरी जातिकी स्वतंत्रताके मार्गमें खड़ी सारी बाधाओंको हटा देनेकी रहेगी।

१५ जनवरी, १९५३ **जॉन पी० फ्लेचर**
(अंग्रेजीसे)

आगामी काबिल परीक्षा

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा, वर्धाकी आगामी काबिल परीक्षा १८, १९ जुलाअी, १९५३ को होगी। फीसके साथ आवेदनपत्र वर्धा कार्यालय पहुंचानेकी आखिरी तारीख १८ जून, १९५३ है। विशेष जानकारीके लिअे नीचे दिये गये पते पर लिखें।

२७-४-'५३ **अमृतलाल नाणावटी**
मंत्री,
हिन्दुस्तानी प्रचार सभा, वर्धा

बम्बअी हिन्दी-हिन्दुस्तानी प्रचारक सम्मेलन

[ता० १२-४-'५३ के दिन बम्बअीमें काकासाहब कालेलकरकी अध्यक्षतामें हुअे हिन्दी-हिन्दुस्तानी प्रचारक सम्मेलनमें पास किये गये प्रस्ताव।]

प्रस्ताव – १

भारतके संविधानकी धारा ३४३ और ३५१ को खयालमें रखकर बम्बअी सरकारने राज्यके स्कूलोंमें हिन्दीकी पढ़ाअी लाजमी तौर पर शुरू करनेकी दृष्टिसे पाठ्यक्रम आदि तैयार करनेके लिअे जो हिन्दी-समिति (पोतदार-समिति) नियुक्त की थी, अुसकी यह सम्मेलन कद्र करता है और आशा रखता है कि सरकार समितिकी सभी सिफारिशों पर जल्दीसे जल्दी अमल करेगी। अिस सम्मेलनकी रायमें यह बहुत जरूरी है कि पोतदार-समितिकी रिपोर्टमें अेक हिन्दी सलाहकार समिति कायम करनेके बारेमें जो सिफारिश की गअी है, अुस पर सरकार जल्दीसे जल्दी अमल करे, जिससे हिन्दीके बारेमें जितना भी काम सरकारको करना है अुसमें बल और सहायता मिले।

प्रस्ताव – २

यह सम्मेलन मानता है कि राष्ट्रभाषा हिन्दीकी पढ़ाअी कॉलेजोंमें पदवी परीक्षा तक अनिवार्य बनाअी जाय और अिसके लिअे राज्यकी युनिवर्सिटियोंमें यथाशीघ्र अिन्तजाम किया जाय।

प्रस्ताव – ३

हिन्दीकी पढ़ाअी अच्छी हो, अिस दृष्टिसे अहिन्दी-भाषी प्रदेशोंमें शिक्षाका माध्यम हिन्दी रखनेका जो विचार पेश किया जाता है, अुसका यह सम्मेलन सख्त विरोध करता है। यह सम्मेलन मानता है कि अिससे वहां नुकसान होगा, जो अंग्रेजीको माध्यम बनानेसे हुआ है। यह विचार प्रादेशिक भाषाओंकी प्रगतिके लिअे बाधक है और अुनकी अुन्नतिमें रोड़ा बनकर रहेगा। सभी कक्षाओंकी पढ़ाअी, यहां तक कि अुच्च और संशोधन तकके लिअे शिक्षाका माध्यम बनना प्रादेशिक भाषाका स्वाभाविक हक है और दूसरी किसी भाषाको यह स्थान देना प्रादेशिक भाषाके अिस स्वाभाविक अधिकारको दबा देना है।

प्रस्ताव – ४

संविधानकी धारा ३५१ में राष्ट्रभाषा हिन्दीके स्वरूपका जो बयान किया गया है, अुसको खयालमें रखकर यह सम्मेलन मानता है कि हिन्दीका विकास, प्रचार और शिक्षण प्रांतीयता और सांप्रदायिकतासे परे होना चाहिये। और यह काम अिस ढंगसे होना चाहिये कि अिससे दूसरी प्रादेशिक भाषा और हिन्दी दोनों अेक-दूसरेकी पूरक और पोषक बनें। अगर अैसा न हुआ तो भारतकी मिलीजुली संस्कृतिके सब तत्त्वोंको व्यक्त करनेका साधन राष्ट्रभाषा हिन्दी नहीं बन सकती। और सब प्रदेशोंके अलग-अलग भाषा बोलनेवाले लोग अुसके साथ पूरा अपनापन महसूस नहीं कर सकते। अिसलिअे अिस सम्मेलनकी रायमें यह जरूरी हो जाता है कि हिन्दीके शिक्षण, विकास और प्रचारका काम अहिन्दी प्रदेशोंमें काम करनेवाली संस्थाओंके द्वारा हो। चूंकि प्रादेशिक हिन्दी और राष्ट्रभाषा हिन्दी दोनों भिन्न हैं, यह साफ है कि अगर हिन्दीके प्रचारमें गलतफहमी दूर करनी हो तो यह आवश्यक है कि अहिन्दी प्रदेशोंमें हिन्दी प्रचारका काम करनेवाली संस्थाओंका संबंध अैसी किसी संस्थासे न होना चाहिये, जो प्रादेशिक हिन्दीका प्रचार करती आअी हो और अब भी करती हो।

प्रस्ताव – ५

बम्बअी सरकारने प्राथमिक स्कूलोंके दर्जे ५, ६, ७ से अंग्रेजीको हटाकर दर्जा ८ से शुरू करनेका जो सिद्धान्त जाहिर किया है, अिसका यह सम्मेलन स्वागत करता है। लेकिन बादमें अंग्रेजीको ७ वें दर्जेमें अैच्छिक रूपसे पढ़ानेकी जो छूट दी गअी है, अुसको यह सम्मेलन नापसन्द करता है। अब तो अिससे भी आगे जाकर ५ और ६ कक्षाओंमें भी अंग्रेजी शुरू करनेकी और अेस० अेस० सी० में वैकल्पिक अंग्रेजीको हटानेकी सूचना आअी है। यह सम्मेलन अिस सूचनाको बड़ी चिन्ताभरी नजरसे देखता है, क्योंकि अिससे न केवल हिन्दीकी पढ़ाअीको धक्का लगेगा, परंतु प्राथमिक सात कक्षाओंके अभ्यासमें बाधा आयेगी और बुनियादी तालीम जैसी कोअी चीज नहीं रहेगी।

सम्मेलनकी यह मजबूत राय है कि अंग्रेजीका दर्जा स्वभाषा और राष्ट्रभाषा हिन्दीके बाद ही आ सकता है। अिस वजहसे और अिस खयालसे कि अंग्रेजी लाजमी होनेके कारण हमारे देशके कितने ही बच्चे अुच्च शिक्षासे वंचित रहे हैं, यह सम्मेलन सिफारिश करता है कि बम्बअी-सरकार अपनी पहली नीति पर न केवल कायम रहे, बल्कि अंग्रेजीको ८ वें दर्जेमें अैच्छिक रूपसे ही शुरू करे।

प्रस्ताव – ६

हिन्दीके लिअे लिपिका सवाल अब संविधान सभाके द्वारा हल हो गया है और अब यह मानी हुअी बात है कि हिन्दीकी लिपि देवनागरी होगी। लेकिन सम्मेलनकी राय है कि विधानकी धारा ३५१ के मुताबिक हिन्दीको अगर भारतकी मिली-जुली संस्कृतिके सब तत्त्वोंको व्यक्त करनेका साधन बनाना है और अगर "हिन्दुस्तानीके रूप, शैली और पदावलिको आत्मसात् करना है", तो यह साफ है कि अुर्दू लिपिको न सिर्फ अैच्छिक तौर पर अपनाना चाहिये, बल्कि अुसे अुत्तेजन भी देना चाहिये। राष्ट्रभाषा हिन्दीका विकास तभी पूरा होगा, जबकि दोनों लिपियां जाननेवाले लोग काफी तादादमें होंगे।

प्रस्ताव – ७

संविधानकी धारा ३५१ को सामने रखते हुअे यह सम्मेलन हिन्दीके विकासके लिअे यह जरूरी समझता है कि अहिन्दी-भाषी लेखकोंको हिन्दीमें किताबें लिखनेके लिअे सरकारें और राष्ट्रीय संस्थायें अुत्तेजन दें।

राष्ट्रभाषा हिन्दुस्तानी

[दूसरा संस्करण]

गांधीजी

अनु० **काशिनाथ त्रिवेदी**

कीमत १–८–० डाकखर्च ०–११–०

नवजीवन कार्यालय, अहमदाबाद–९

विषय-सूची

		पृष्ठ
बेचैन करनेवाली खबर	मगनभाअी देसाअी	६५
हमारा अनोखा मिशन–१	विनोबा	६५
भूदान-यज्ञ और शोषण-निवारण	मगनभाअी देसाअी	६८
गांधीवाद	गांधीजी	६९
दक्षिण अफ्रीकामें सत्याग्रह	जॉन पी० फ्लेचर	६९
बम्बअी हिन्दी-हिन्दुस्तानी प्रचारक सम्मेलन		७२
टिप्पणी:		
आगामी काबिल परीक्षा	अ० नाणावटी	७१